THE TIMES OF INDIA

Date:29-03-24

We're What We Feel

Daniel Kahneman, 2002 economics Nobel winner, showed emotions guide decisions

TOI Editorials

A young Jewish boy was rushing home in Nazi occupied Paris, trying to avoid attention. He had missed the 6 pm curfew and the Star of David on his sweater, a compulsory identifier for Jews, meant trouble. That seemed to come in the form of an approaching German in a black uniform of the dreaded SS. What happened next would influence the evolution of economic theory later. The German stopped him and spoke with emotion. He pulled out his wallet and showed him the picture of a child. He finally sent the boy home with some money. It led Kahneman to conclude people are "endlessly complicated and interesting".

Economics built its theoretical framework around unemotional human beings who made rational choices. Kahneman and his collaborator Amos Tversky injected a dose of realism into this framework. This happened by integrating lessons from psychology into the decision-making of the economic man. It's intuitive, we have a limited amount of will power or self-control. That can't lead to the always rational "homo economicus". Kahneman's work laid the foundation of behavioural economics, which provides better insights into real world behaviour.

Kahneman's core ideas revolve around decision-making in a world of uncertainties. He emphasised the importance of intuitive judgements, which are a halfway point between perceptions and reasoning. Our intuition depends on mental approaches we are comfortable with. Perhaps it's in financial markets that these psychological insights show up repeatedly. At the end of every asset bubble, the only certainty is that we will repeat the mistakes. Kahneman's work is not judgemental in nature. He observed it's entrepreneurs' "delusional optimism" that is one of capitalism's driving forces. His most important lesson was that economics is about human behaviour. And we're complicated and sometimes unpredictable.

THE HINDU

Date:29-03-24

Easily provoked

India is not showing confidence about its own democratic record

Editorial

New Delhi and Washington appear to be squaring off for a fight over the U.S. expressing its concerns about the Modi government's actions ahead of the general election. After the U.S. State Department spokesperson first made a comment on the arrest of Delhi Chief Minister Arvind Kejriwal, the Ministry of External Affairs (MEA) summoned the acting Deputy Chief of the U.S. mission in Delhi and sternly called on the U.S. to desist from interfering in India's internal affairs. A dressing down was also handed to a German diplomat for a similar statement by Germany. However, while the German government appeared to tone down its remarks subsequently, the U.S. administration seems to have doubled down — repeating statements on the need for "fair, transparent, timely legal processes", and adding the freezing of the Congress Party's accounts during the election campaign amongst its concerns, prompting yet another rebuke. The U.S.'s statements, galling for the government, are not new, and its concerns over the Citizenship (Amendment) Act, farmers' protests, actions against NGOs, and legal action against Opposition politicians have been growing. The Modi government may wish to introspect about whether any of these interventions are valid concerns, and it may be of significance to probe whether this brinkmanship is a symptom of a larger problem in the India-U.S. relationship. Since the U.S. announced an indictment into an alleged assassination plot against a Khalistani separatist and India critic, Gurpatwant Singh Pannun, claiming a link to a top Indian national security official, the quality of public engagement appears to have suffered a setback, even though trade, technology sharing, and military and strategic cooperation remain strong. The decision by U.S. President Joe Biden to decline India's invitation as Republic Day chief guest and to attend the Quad summit, and the cancellation of U.S. NSA Jake Sullivan's visit, even as the post of Indian Ambassador to Washington lies vacant, merit close examination.

Given the kerfuffle over Mr. Kejriwal's arrest, New Delhi has a few choices: it can choose to continue this high-decibel, public and unseemly spat; it can pay the U.S. back in the same coin by commenting on its internal developments; or it can refuse to be provoked. The last option may seem the least attractive to this government, which has made a habit of pugilistic public diplomacy, but in fact would come from a place of strength and security. Global leadership, of the kind that India aspires to, requires broad shoulders, and a thick skin when it comes to criticism, along with a quiet confidence that its democratic record should speak for itself.

दैनिक भास्कर

Date:29-03-24

विकास को लेकर हमारा नजरिया बदलना होगा

संपादकीय

सरकार 19 करोड़ घरेलू महिलाओं को वर्कफोर्स में शामिल मानने जा रही है। बच्चों की परवरिश या घरेलू कामकाज को श्रम मानते हुए उसका कागजों पर मूल्य तय किया जाएगा, जिससे देश की जीडीपी बढ़ जाएगी। ऐसे ही एक अन्य प्रयास में, जो युवा रेगुलर नौकरी न मिलने से निराश हो वापस घर लौटकर घर की दुकान या छोटे-मोटे काम में बगैर किसी तनख्वाह के हाथ बंटाने लगता है, उसे सरकार ने रोजगार मानते हुए बेरोजगारी कम करने का दावा भी किया है। इनका प्रतिशत वर्ष 2017-8 में 26 था, वह वर्ष 2022-23 में 31.5 हो गया, जबकि वेतन वाले जॉब्स कम होते गए। इस लिहाज से बेरोजगारी घटकर 3.4 प्रतिशत हो गई है। उधर आईएलओ और आईएचडी के संयुक्त नए अध्ययन की रिपोर्ट के अनुसार भारत में सेकंडरी स्तर तक शिक्षा पाए युवाओं में बेरोजगारी बढ़कर 18.4 प्रतिशत और डिग्री धारकों में 29.1 प्रतिशत हो गई है। यानी अगर आपने अपने बच्चों को इंटर या डिग्री स्तर तक की शिक्षा दी है तो उसके रोजगार पाने के मौके क्रमशः छह गुना और नौ गुना कम हो जाएंगे। हम कागजों पर आंकड़े घटा-बढ़ा तो सकते हैं लेकिन जब उन्हें वास्तविक पैमानों पर देखते हैं तो सच्चाई कुछ और ही होती है। विकास को लेकर नजरिया बदलना होगा।

दैनिक जागरण

Date:29-03-24

हिन्द महासागर में नई चुनौती

हर्ष वी. पंत, (लेखक आब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में उपाध्यक्ष हैं)

हिंद महासागर स्थित मालदीव में नई सरकार गठित होने के बाद से उसकी भारत की तनातनी बढ़ने पर है। रसातल में जा रहे रिश्तों का संज्ञान लेते हुए मालदीव के पूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद ने अपनी जनता की ओर से भारत के माफी मांगी। उन्होंने मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू के सामान्य कूटनीतिक शिष्टाचार के प्रतिकूल व्यवहार पर भारत की संयत प्रतिक्रिया को भी सराहा।

नशीद ने कहा, 'जब मालदीव के राष्ट्रपति ने भारतीय सैन्यकर्मियों से देश छोड़ने को कहा तो भारत ने किसी प्रकार की कोई दबंगई नहीं दिखाई और मामले पर संवाद की राह अपनाई।' मोइज्जू का चुनाव प्रचार अभियान ही भारत विरोध पर केंद्रित था। सत्ता संभालने के बाद उन्होंने अपने पहले विदेश दौरे के लिए तुर्किये को चुना, जबकि उनके पूर्ववर्ती अपने पहले विदेश दौरे पर भारत आते रहे। दिसंबर में आयोजित कोलंबो सुरक्षा सम्मेलन में भी मालदीव अनुपस्थित रहा।

मुइज्जू सरकार ने भारत के साथ हाइड्रोग्राफिक सर्वे के अनुबंध को भी आगे बढ़ाने से इन्कार कर दिया। पिछले साल के अंत में और नववर्ष के अवसर पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के लक्षद्वीप दौरे के बाद भी तल्खियां देखी गईं। मालदीव के कुछ मंत्रियों को लगा कि मोदी मालदीव के मुकाबले लक्षद्वीप को खड़ा करने का प्रयास कर रहे और उन्होंने भारतीय

प्रधानमंत्री पर कुछ अपमानजनक टिप्पणियां कीं। उसके बाद इंटरनेट मीडिया पर व्यापक आक्रोश देखा गया, जिसकी तपिश मालदीव और उसके पर्यटन उद्योग को झेलनी पड़ी। इस पर भी मुइज्जू की हेकड़ी कम नहीं हुई थी। उन्होंने कहा कि हम भले ही छोटे देश हैं, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि हमें धमकाया जाएगा।

एक ओर मुइज्जू के नेतृत्व में मालदीव भारत से किनारा कर रहा है तो दूसरी ओर वह चीन से नजदीकियां बढ़ाने में लगा है। चीन की महत्वाकांक्षी बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव परियोजना की सराहना करते हुए मुइज्जू ने इसे मालदीव के इतिहास की सबसे उल्लेखनीय अवसंरचना परियोजना बताया। जहां मुइज्जू को मालदीव में मौजूद चुनिंदा भारतीय सैनिकों की वापसी को लेकर कुछ ज्यादा ही जल्दबाजी थी, वहीं चीन के साथ सामरिक करार को लेकर भी वह बहुत हड़बड़ी में दिखे।

चीन के साथ इस करार में तमाम बातें भले ही गुप्त रखी जा रही हों, लेकिन सामरिक मामलों में चीन की संदिग्ध मंशा किसी से छिपी नहीं रही है। यह वाकई हैरान करने वाली बात है कि सामरिक साझेदारी के मोर्चे पर मुइज्जू को पारदर्शी एवं लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले भारत से तो समस्या थी, लेकिन तानाशाही शासन वाले साम्यवादी चीन के साथ नहीं। इस पूरे प्रकरण पर भारत की प्रतिक्रिया बहुत परिपक्व एवं संयत रही। विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने कहा कि कई बार देशों के बीच कुछ गलतफहमियां पैदा हो सकती हैं। जयशंकर ने कूटनीतिक माध्यमों के जरिये उन गलफहमियों के दूर होने की आशा भी जताई। बीते दिनों मुइज्जू के तेवर कुछ नरम भी दिखे, जब उन्होंने भारत से लिए कर्ज के प्रविधानों को लेकर कुछ राहत-रियायत बरतने की बात कही। उल्लेखनीय है कि मालदीव इस समय भारी कर्ज के बोझ तले दबा है।

चीन के प्रति मालदीव का हालिया झुकाव भारत के नजरिये से तो वैसे उसका अंदरूनी मामला है, लेकिन उसके लिए इसमें चिंता की कड़ी सामरिक रूप से महत्वपूर्ण हिंद महासागर में चीन की निरंतर बढ़ती पैठ से जुड़ी है। पारंपरिक रूप से मालदीव की विदेश नीति भारत और चीन को लेकर संतुलन साधने की रही है, मगर मुइज्जू सरकार में बीजिंग की नजर इस महत्वपूर्ण सामुद्रिक क्षेत्र में अपनी भूमिका बढ़ाने पर केंद्रित है। हिंद-प्रशांत के उभरते रणनीतिक अखाड़े में हिंद महासागर शक्ति को लेकर प्रतिस्पर्धा के अहम केंद्र के रूप में उभरा है।

इसमें समकालीन भू-राजनीति एवं भू-आर्थिकी का महत्वपूर्ण कोण भी जुड़ा हुआ है। हिंद महासागर क्षेत्र के नेतृत्व की आकांक्षा भारतीय योजनाओं का भी हिस्सा है। भारत में पहले से यह मान्यता चली आ रही है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वयं को एक प्रमुख शक्ति के रूप में स्थापित करने की भारतीय महत्वाकांक्षा की एक कुंजी हिंद महासागर है। भारत के प्रभावशाली राजनयिक केएम पणिक्कर ने तो यहां तक कहा था कि भारत के भविष्य को सुरक्षित रखने के लिए 'हिंद महासागर के स्वरूप को वास्तविक रूप से भारतीय बनाए रखना' ही होगा। हाल के दौर में भारतीय नेताओं ने इसी रणनीति को अपनाया। पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने जहां हिंद महासागर से इतर फारस की खाड़ी और मलक्का स्ट्रेट तक को भारतीय सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना, वहीं उनके बाद प्रधानमंत्री रहे मनमोहन सिंह ने इस जरूरत पर जोर दिया कि भारत को हिंद महासागर क्षेत्र में सुरक्षा प्रदान करने वाला प्रमुख खिलाड़ी बनना चाहिए।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 2015 में हिंद महासागर क्षेत्र में सामुद्रिक सहयोग के भारतीय आह्वान को 'सिक्योरिटी एंड ग्रोथ फोर आल इन द रीजन (सागर)' नाम भी दिया। इस संकल्पना के मूल में समूचे हिंद महासागर क्षेत्र में सामुद्रिक सहयोग तंत्र, आर्थिक एकीकरण और सतत विकास जैसे लक्ष्य थे, जिन्हें साझा हितों एवं दायित्वों के साथ मूर्त रूप दिया जाए और उसमें निजी हितों पर सामूहिक बेहतरी को प्राथमिकता मिले।

हिंद-प्रशांत क्षेत्र में हिंद महासागर एक प्रमुख शक्ति-केंद्र के रूप में सामने आया है। इसमें छोटे-छोटे देशों की महत्ता भी बढ़ी है, क्योंकि इसमें बड़ी शक्तियों का भी दांव लगा हुआ है। इसमें मालदीव इकलौता देश नहीं, जो अपनी रणनीतिक स्थिति का लाभ उठा रहा है। दूसरी ओर, हाल के वर्षों में भारत के नीतिगत विकल्प भी बढ़े हैं। यदि मालदीव के साथ संबंधों में कुछ तल्खी आई तो भारत ने मारीशस के साथ अपने रिश्तों को नया आयाम दिया है।

प्रधानमंत्री मोदी ने गत माह मारीशस में नई एयरस्ट्रिप और जेट्टी का मारीशस के प्रधानमंत्री प्रविंद जगन्नाथ के साथ मिलकर उद्घाटन किया। इसी महीने की शुरुआत में भारत ने लक्षद्वीप में आइएनएस जटायु की तैनाती की। इससे हिंद महासागर क्षेत्र में भारतीय नौसेना की क्षमताओं में इजाफा होगा। भारत इस क्षेत्र में एक संतुलित दृष्टिकोण अपना रहा है, जिसमें एक सुरक्षित, समृद्ध एवं नियम संचालित हिंद महासागर क्षेत्र अस्तित्व में आए जो उसके रणनीतिक एवं आर्थिक हितों के भी अनुकूल हो। चूंकि इस क्षेत्र में निरंतर हलचल बढ़ रही है तो नई दिल्ली को निरंतर चौकसी बरतनी होगी।

Date:29-03-24

सहकारिता क्षेत्र को मिला खुला आसमान

दीनानाथ ठाकुर, (लेखक राष्ट्रीय सहकार भारती के राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं)

एक-दूसरे का हाथ थाम कर आगे बढ़ने वाली सहकारिता के लिए यह दौर किसी क्रांति से कम नहीं है। सहकारिता क्षेत्र में विश्वास और समर्पण का जो संकट पैदा हुआ था, आज उसका काफी कुछ निवारण होने लगा है। यह संभव हुआ है सहकारिता क्षेत्र में बहुप्रतीक्षित कानूनी सुधार और आधुनिक तकनीक के उपयोग से। इन सुधारों से सीमित दायरे में सिमटे सहकारिता क्षेत्र को खुला आसमान मिल गया है। किसानों, गरीबों, वंचितों, महिलाओं और युवाओं के लिए यह क्षेत्र सबसे उपयोगी साबित हो रहा है।

फसलों के बीज, आर्गेनिक खेती और सहकारी उत्पादों के निर्यात के लिए गठित राष्ट्रीय सहकारी सोसायटियां अब कारपोरेट सेक्टर का मुकाबला करने को तत्पर हैं। इस प्रकार ग्रामीण विकास के रास्ते अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने में इस क्षेत्र का योगदान सबसे अधिक होने वाला है। दुग्ध क्षेत्र की सहकारी सोसायटी अमूल और फर्टिलाइजर क्षेत्र की सहकारी सोसायटी इफ्को विश्वस्तर पर चर्चित ब्रांड बन चुके हैं। देश के कुल फर्टिलाइजर उत्पादन और वितरण में इसकी भूमिका अहम है।

चीनी उद्योग में भी सहकारी क्षेत्र ने अपनी धाक जमाई है। चीनी उद्योग क्षेत्र मुट्ठीभर लोगों के हाथों में सिमट गया, जिनका दखल देश की राजनीति में भी अच्छा खासा रहा। लिहाजा सुधार के बारे में कभी विचार नहीं किया गया। उत्तर भारत की सहकारी चीनी मिलें लगभग बंद हो चुकी हैं। सीमित क्षेत्रों के अलावा सहकारिता का प्रसार अन्य क्षेत्रों में नहीं हो सका, जबकि बैंकिंग से लेकर छोटे-बड़े तमाम क्षेत्रों में इसका प्रभाव था। यह सच है कि बीते 60-65 वर्षों में सहकारिता की क्षमता को आंकने का प्रयास ही नहीं किया गया। इस क्षेत्र को प्रोत्साहित करने वाली नीतियों के निर्माण को लेकर भी पिछली सरकारें उदासीन रहीं, परंतु अब स्थितियों में परिवर्तन हुआ है।

मोदी सरकार ने सहकारी क्षेत्र के लिए सबसे महत्वपूर्ण पहल अलग से सहकारिता मंत्रालय की स्थापना करके की। केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह को इसका दायित्व मिलने के बाद इस क्षेत्र ने तेजी पकड़ी है। कभी मुट्ठीभर लोगों के हाथों में सिमटने वाली सहकारी सोसायटियों को विकास करने का अवसर मिला है। राज्य स्तर पर निचली इकाई प्राथमिक कृषि ऋण सोसायटी (पैक्स) से संबंधित नियम बदले गए, ताकि इसका दरवाजा सबके लिए खुले। राज्यों ने इसे हाथोंहाथ लिया। सदस्यता अभियान चलाया गया।

डिजिटल क्रांति का लाभ लेने के लिए सहकारिता क्षेत्र में कंप्यूटर और इंटरनेट का खुलकर उपयोग शुरू हुआ। ग्राम पंचायत स्तर की सोसायटियां सीधे जिला, राज्य और केंद्रीय सहकारी संस्थाओं से जुड़ गईं। चिट्ठी की जगह ई-मेल और बटन दबाते ही सहकारी सदस्यों के खाते में उनका हिस्सा पहुंचने लगा। सहकारिता क्षेत्र में किए गए सुधार से सहकारी इकाइयों के कारोबारी कार्यक्षेत्रों का विस्तार भी हो गया है। आज उन्हें रसोई गैस, पेट्रोल पंप, बैंकिंग मित्र, राशन की दुकान (पीडीएस) चलाने, कामन सर्विस सेंटर (सीएससी) और जन औषधि केंद्र चलाने जैसे दो दर्जन से अधिक क्षेत्रों में प्राथमिकता दी जाने लगी है।

सहकारी संस्थाओं के दरवाजे सबके लिए खुलने से उनका सदस्य बनने में लोगों का उत्साह बढ़ने लगा है। इससे लोगों को स्थानीय स्तर पर रोजगार मिल रहा है। और तो और सहकारी संस्थाओं को वित्तीय सहायता का रास्ता भी खुल गया है। आज राष्ट्रीय सहकारिता विकास निगम (एनसीडीसी) की ऋण प्रदान करने की क्षमता 25 हजार करोड़ रुपये से बढ़कर सवा लाख करोड़ रुपये पहुंच चुकी है। सहकारी बैंकों के दिन भी बहुरने लगे हैं। उन पर लगाए प्रतिबंधों को हटाने के साथ उनके नियमन की व्यवस्था कर दी गई है। नई शाखाएं खोलने के साथ वन टाइम सेटलमेंट जैसी सुविधाएं उन्हें मिल गई हैं।

सहकारिता क्षेत्र में कानूनी सुधार के अतिरिक्त नियमों में सुधार और कार्यप्रणाली में सुधार के साथ उनके व्यवसाय की सबसे बड़ी चुनौती को दूर करने की भी व्यवस्था की गई है। स्थानीय स्तर की सहकारी सोसायटियों के उत्पाद को बाजार मुहैया कराना भी इसमें शामिल है। इसके लिए तीन ऐसी सहकारी सोसायटियां स्थापित की गई हैं, जिनका प्रभाव पैक्स स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक देखने को मिलेगा।

खाद्य सुरक्षा की दिशा में सहकारी क्षेत्र खेती के प्रमुख इनपुट उपलब्ध कराने से लेकर उपज के भंडारण के लिए गोदाम बनाने और अतिरिक्त उत्पादन के निर्यात की भी योजना सिरे चढ़ने लगी है। एक लाख करोड़ रुपये की लागत वाली दुनिया की सबसे बड़ी भंडारण योजना के तहत सहकारिता क्षेत्र गांव-गांव गोदाम बना रहा है। इससे फसल कटाई के बाद 27 प्रतिशत तक होने वाले नुकसान को रोकने में मदद मिलेगी।

कृषि क्षेत्र की विकास दर स्थिर होने के मद्देनजर सहकारिता क्षेत्र मत्स्य पालन, पशु पालन और डेयरी क्षेत्र को भी आगे बढ़ा रहा है। मछुआरों और पशुपालकों को किसान मानते हुए उन्हें किसान क्रेडिट कार्ड दिया जा रहा है। उनके लिए दो लाख प्राथमिक स्तर की सोसायटी के गठन का प्रविधान किया गया है, ताकि उन्हें कारोबार करने के लिए रियायती ऋण की सुविधा मिल सके।

देश में लगभग आठ लाख सहकारी सोसायटियां है, जिनके 29 करोड़ से अधिक सहकार सदस्य हैं। कुल 11 तरह की सहकारी समितियां हैं, जिनमें प्राथमिक समितियों के अलावा ब्लाक, तहसील, जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर के फेडरेशन के साथ जिला और राज्य स्तरीय सहकारी बैंक शामिल हैं। इस प्रकार प्रजातांत्रिक अर्थव्यवस्था के माध्यम से दुनिया का

सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक देश विकास की नई गाथा लिख रहा है। यह जन-जन को विकास की मुख्यधारा से जोड़कर विकसित भारत की उपलब्धि के मार्ग प्रशस्त करेगा।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:29-03-24

रोजगार के अवसर

संपादकीय

अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) तथा मानव विकास संस्थान ने मिलकर एक रिपोर्ट जारी की है जिसमें सन 2000 के बाद से भारत में रोजगार के उपलब्ध आंकड़ों का व्यापक विश्लेषण किया गया है। वर्ष 2012 तक यह सर्वे रोजगार और बेरोजगारी के सर्वेक्षणों पर निर्भर था और 2019 से 2022 तक के आंकड़ों के लिए रिपोर्ट ने राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के सावधिक श्रम बल सर्वेक्षण को प्राथमिक स्रोत के रूप में इस्तेमाल किया।

चूंकि आंकड़ों के ये स्रोत पहले ही चर्चा का विषय बन चुके हैं इसलिए रिपोर्ट की विषयवस्तु है: संगठित क्षेत्र में वास्तविक पारिश्रमिक में ठहराव, कृषि रोजगार की ओर वापसी और महिला श्रम भागीदारी दर जो पहले गिर रही थी लेकिन हाल के दिनों में उसमें इजाफा हुआ जिसकी वजह प्रमुख रूप से स्वरोजगार और बिना मेहनताने का घरेलू कामकाज है। जबकि इस बीच बड़ी तादाद में शिक्षित युवा बेरोजगार हैं।

आईएलओ ने दो अलग-अलग सर्वेक्षण को एक साथ लाकर अच्छा काम किया है परंतु आंकड़ों की सामान्य उपलब्धता को देखते हुए रिपोर्ट में सबसे अधिक रुचि उसके निष्कर्षों और अनुशंसाओं के कारण है।

रिपोर्ट पांच प्राथमिकताओं को चिह्नित करती है। पहली उत्पादन और वृद्धि को और अधिक रोजगार आधारित बनाया जाना चाहिए। दूसरी, रोजगार की गुणवत्ता में सुधार होना चाहिए और इसके लिए प्रवासन और नए दौर के क्षेत्रों मसलन केयर इकॉनमी (अनौपचारिक और अवैतनिक देखभाल की अर्थव्यवस्था मसलन महिलाओं द्वारा घर में किए जाने वाले काम) में निवेश करना होगा तथा श्रम अधिकार सुनिश्चित करने होंगे।

तीसरी, श्रम बाजार की असमानताएं जो महिलाओं, युवाओं और हाशिये पर मौजूद समूहों के लोगों को प्रभावित करती हैं, उनके लिए नीतियां तैयार करना। चौथी प्राथमिकता है कौशल प्रशिक्षण और सक्रिय श्रम बाजार नीतियों को बढ़ावा देना। पांचवीं प्राथमिकता है रोजगार को लेकर बेहतर और अधिक आंकड़े।

निस्संदेह इनमें से कई अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। शायद ही कोई होगा जो समय पर और बेहतर आंकड़ों की जरूरत से इनकार करेगा। कुछ आंकड़ों पर जब करीबी नजर डाली जाती है तो सवाल पैदा होते हैं। मसलन असमानता को सीधे तौर पर कैसे हल किया जा सकता है?

यह स्पष्ट है कि महिलाओं के घर या कृषि से बाहर रोजगार बढ़ा पाने में कमी कई बार सांस्कृतिक कारणों से भी पैदा होती है और कई अन्य मामलों में ऐसा अनुकूल माहौल तथा कानून व्यवस्था से जुड़ी चिंताओं की वजह से भी है। इसके लिए बहुत बड़े पैमाने पर सामाजिक सुधारों की आवश्यकता है।

बहरहाल सबसे अधिक सटीक अनुशंसा यह है कि उत्पादन को और अधिक रोजगारपरक बनाने की आवश्यकता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि सेवा क्षेत्र आधारित वृद्धि के रोजगार संबंधी लाभ रोजगार की मौजूदा चुनौतियों को पूरा कर पाने में सक्षम नहीं हैं। ऐसा इसलिए कि उद्योग और विनिर्माण में अपेक्षाकृत कम कुशल श्रमिक शामिल होते हैं जो खेती जैसे काम से बाहर निकलते हैं।

इस दलील को रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर रघुराम राजन तथा अन्य लोगों के हालिया तर्कों से जोड़कर देखा जा सकता है जिनका कहना है कि भारत के भविष्य की वृद्धि सेवा क्षेत्र पर निर्भर होगी। यह दलील देने वालों का कहना है कि तकनीकी नवाचार और स्वचालन ने विनिर्माण को प्रभावित किया है। अब यह अधिक पूंजी खपत वाला क्षेत्र है जबकि पहले यह श्रम आधारित था।

मेहनताने को लेकर मध्यस्थता अब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रभावी नहीं रह गई है। रिपोर्ट में कहा गया है कि सेवा क्षेत्र में भी ऐसी ही प्रक्रियाएं काम कर रही हैं। कई लोगों ने यह भी कहा कि सेवा क्षेत्र कम कुशल लोगों के साथ प्रभावी ढंग से आगे नहीं बढ़ पाएगा। यानी देश के नीति निर्माताओं के पास कुछ ही अच्छे विकल्प हैं।

तेज तकनीकी विकास और उभरती विश्व व्यवस्था को देखते हुए वृद्धि और रोजगार निर्माण के मानक तौर तरीके शायद भविष्य में काम न आएं। ऐसे में भविष्य की बात करें तो भारत को हर अवसर का पूरा लाभ उठाते हुए अधिकतम रोजगार सृजन करने की तैयारी रखनी होगी।

जनसत्ता

Date:29-03-24

बेरोजगारी का अर्थ

संपादकीय

अर्थव्यवस्था की चमकती तस्वीर के बीच अगर बेरोजगारी के आंकड़े में युवाओं की हिस्सेदारी चिंताजनक स्तर तक दिखाई देने लगे तो सोचने की जरूरत है कि विकास के रास्ते में इस मसले का क्या हल है। हालांकि हाल के वर्षों में युवाओं की संख्या और ऊर्जा को देश की ताकत के तौर पर पेश किया गया और उन्हें विकास का बाहक बताया गया है, लेकिन अब अगर युवाओं का ज्यादातर हिस्सा बेरोजगारी की समस्या का सामना

कर रहा है तो उसे कैसे देखा जाएगा ? गौरतलब है कि मानव विकास संस्थान यानी आइएचडी के साथ मिल कर अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन यानी आइएलओ ने मंगलवार को 'इंडिया एंप्लायमेंट रपट 2024' जारी की है। इस रपट में बताया गया है कि देश में अगर बेरोजगार लोगों की कुल संख्या एक सौ है तो उसमें तिरासी लोग युवा हैं अगर देश की बेरोजगारी की तस्वीर में तिरासी फीसद युवा दिख रहे हैं, तो इससे कैसे देश की ताकत में इजाफा हो रहा है?

भारत में बेरोजगारी की स्थिति पर तैयार इस अहम रपट में कुछ विरोधाभासों पर भी गौर करने में मदद मिलती है। माना जाता है कि बेरोजगारी की समस्या काफी हद तक शिक्षा और कौशल विकास के अभाव का भी नतीजा है। मगर आइएलओ की रपट के मुताबिक, देश के कुल बेरोजगार युवाओं की तादाद में करीब दो दशक पहले के मुकाबले अब लगभग दोगुनी बढ़ोतरी हो चुकी है। खासतौर पर कोरोना महामारी के असर वाले वर्षों में इसमें तेज गिरावट दर्ज की गई। वर्ष 2000 में पढ़े-लिखे युवा बेरोजगारों की संख्या रोजगार से वंचित कुल युवाओं में 35.2 फीसद थी, वहीं 2022 में यह बढ़ कर 65.7 फीसद हो गई। यह स्थिति तब है, जब इस अध्ययन में उन पढ़े- लिखे युवाओं को भी शामिल किया गया, जिन्होंने कम के कम दसवीं तक की शिक्षा हासिल की हो इस आलम एक जटिल स्थिति यह पैदा होती है कि जितने लोगों को रोजगार मिल सका, उनमें से नब्बे फीसद श्रमिक अनौपचारिक काम में लगे हुए हैं, जबकि नियमित काम का हिस्सा बीते पांच वर्षों में काफी कम हो गया है। हालांकि सन 2000 के बाद इसमें बढ़ोतरी दर्ज की गई थी।

बेरोजगारी की दुखद तस्वीर के बीच एक खराब स्थिति यह है कि इस दौरान ठेकेदारी प्रथा में वृद्धि हुई है। रपट के मुताबिक, संगठित क्षेत्रों में भी कुल कर्मचारियों का कुछ फीसद हिस्सा ही नियमित है और वे दीर्घकालिक अनुबंधों के दायरे में आते हैं। ऐसी स्थिति में अंदाजा लगाया जा सकता है कि आजीविका से जुड़ी व्यापक असुरक्षा की स्थितियों का लोगों के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता होगा। विडंबना यह है कि बढ़ती बेरोजगारी के साथ घटती आय का सामना कर रहे परिवारों में सीधा असर यह पड़ता है कि बच्चों और खासतौर पर लड़कियों की शिक्षा बाधित होती है। आखिर क्या कारण है कि देश में गरीब और हाशिये के तबकों के बीच दसवीं के बाद पढ़ाई छोड़ने की दर आज भी उच्च स्तर पर बनी हुई है? आधी-अधूरी शिक्षा और कौशल के अभाव की समस्या का सामना करते युवा वर्ग की जगह अर्थव्यवस्था में कहां और किस रूप में है? राजनीतिक नारेबाजी में देश में युवाओं की बढ़ती तादाद और ताकत को एक उम्मीद के तौर पर पेश करने में कोई कमी नहीं की जाती है। मगर वादों या घोषणाओं के नीतिगत स्तर पर जमीन पर उतरने की हकीकत कई बार उसके उलट होती है। सवाल है कि इस विरोधाभासी स्थिति के रहते विकास की राह कहां पहुंचेगी !

राष्ट्रीय सहारा

Date:29-03-24

छठी अनुसूची से उम्मीदें

डॉ ब्रहमदीप अलूने

छठीअनुसूची पूर्वोत्तर राज्यों के जनजातीय समुदायों को एक बड़े प्रशासनिक या राजनीतिक ढांचे के भीतर काफी स्वायत्तता देती है। स्वायत्त जिला परिषद या एडीसी का द्वारा संचालित इस निकाय के पास जल, जंगल और जमीन के स्वतः पुलिस और सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने के लिए सीमित स्तर पर अदालती अधिकार भी होते हैं। आदिवासियों की संस्कृति के संरक्षण के लिए बनाए गए इन कानूनों को लेकर यह अपेक्षा रही कि इससे भारत की एकता एवं अखंडता अक्षुण्ण रहेगी, लेकिन जिन क्षेत्रों में यह लागू है, वहां की आंतरिक अशांति की चुनौतियों देश की सामरिक समस्याओं को बढ़ाती रही है।

मसलन, असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम में जनजातियों को संरक्षण देने के लिए छठी अनुसूची के अंतर्गत लाया तो गया है, लेकिन पूर्वोत्तर के ये क्षेत्र लंबे समय से आतंक, अलगाववाद, घुसपैठ और प्रतिद्वंद्वी समूहों के हिंसक कृत्यों से समस्या ग्रस्त रहे हैं। अब भारत के केंद्रशासित प्रदेश लद्दाख में भी छठी अनुसूची लागू करने की मांग को लेकर व्यापक आंदोलन चल रहा है। छठी अनुसूची में शामिल होने से खास इलाके को स्थानीय प्रशासन के लिहाज से खास प्रकार का जनजातीय दर्जा मिल जाता है। लद्दाख में कई आदिवासी समुदायों की समृद्ध परंपराएं हैं, और यह प्रदेश आदिवासी कला और संस्कृति की दृष्टि से छठी अनुसूची में शामिल होने का हकदार भी है, लेकिन किसी प्रदेश की कला और संस्कृति के साथ उसकी रणनीतिक स्थिति का भी महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। लद्दाख की सीमाएं हमारे दो दुश्मन देशों पाकिस्तान और चीन से लगती हैं। लद्दाख के दरें मध्य एशिया, दक्षिण एशिया और चीन के बीच व्यापार को जोड़ते थे और इसीलिए इस पर आधिपत्य का खूनी इतिहास रहा है। लद्दाख की सुरक्षा भारत के लिए रणनीतिक ही नहीं, बल्कि आर्थिक तौर पर भी बेहद जरूरी है। लद्दाख की रणनीतिक स्थिति का उपयोग भारत की आर्थिक मांगों को पूरा करने के लिए नये व्यापार मार्गों को विकसित करने के लिए किया जा सकता है। वहीं लद्दाख की सामरिक संवेदनशीलता को समझना भी बेहद जरूरी है। प्राचीन काल से ही लद्दाख सामरिक दृष्टि से वृहत् मध्य एशिया का हिस्सा रहा है। रूसी, चीनी, तिब्बती, मंगोल, फारसी और भारतीय सहित तत्कालीन साम्राज्यों द्वारा इस क्षेत्र के दरों पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए कई युद्ध लड़े गए। लेह और कारगिल जिलों से बने लद्दाख की नब्बे फीसद आबादी आदिवासी है। गुज्जर, बकरवाल, बोट्स, चांगपास, बाल्टिस और पुरिगपास विभिन्न इलाकों में बसते हैं। करीब तीन लाख की आबादी वाले लद्दाख में सैंतालीस फीसद मुसलमान हैं। यहां दो जिले लेह और कारगिल हैं। लेह बौद्ध बहुसंख्यक है तो कारगिल में मुस्लिम । विकास को लेकर लद्दाख के क्षेत्रों के लोग ही एक दूसरे का विरोध करते रहे हैं। कारगिल के लोगों की मांग है कि जब लेह और कारगिल में लगभग बराबर आबादी है, तो विकास का अधिकांश हिस्सा लेह की झोली में क्यों जाता है?

उनका कहना है कि केंद्र सरकार कारगिल में भी उतना ही विकास करे जितना वो लेह में करने की योजना रखती है। लद्दाख ऑटोनोमस हिल डवलपमेंट काउंसिल लेह और कारगिल, दोनों में ही सबसे मजबूत राजनीतिक संगठन रहा है, जो विकास को लेकर केंद्र सरकार से बात करता रहा है। लद्दाख के लोग जमीन, रोजगार, पर्यावरण की सुरक्षा और सांस्कृतिक पहचान को बढ़ावा देने के लिए छठी अनुसूची को आदर्श मानते हैं और उन्हें लगता है कि इससे लद्दाख का तेजी से विकास हो सकेगा। अतः यहां आदिवासियों के हितों को संवैधानिक सुरक्षा प्रदान की जाए। इन सबके बीच इन इलाकों में बौद्धों और मुसलमानों के बीच हिंसक संघर्ष को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। 1989 में, बौद्धों और मुसलमानों के बीच हिंसक दंगे हुए थे। छठी अनुसूची लागू होने की स्थिति में मुसलमान बाहुल्य इलाके और बौद्ध बाहुल्य इलाकों में अलग-अलग स्वायत्त परिषद के नियम हो सकते हैं। इससे न केवल बौद्ध और मुसलमानों में तनाव बढ़ सकता है, बल्कि आदिवासी बनाम गैर-आदिवासी संघर्ष के बढ़ने का भी अंदेशा है। राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग ने संविधान की छठी अनुसूची के तहत लद्दाख को जनजातीय क्षेत्र का दर्जा देने की सिफारिश की है। लद्दाख में जो आंदोलन चल रहा है, उसमें मुस्लिम और बौद्ध दोनों एकजुट दिख रहे हैं। दोनों ही समुदाय के लोग ज्यादा

राजनीतिक प्रतिनिधित्व, राज्य का दर्जा और शासन में अधिक स्वायत्तता की मांग कर रहे हैं। छठी अनुसूची का हिस्सा बनने से उस क्षेत्र में विकास से जुड़ी परियोजनाओं में भी स्थानीय मूल के लोगों की सहमति असहमति का महत्त्व बढ़ जाता है। लद्दाख के लोग यही सुनिश्चित करना चाह रहे हैं।

ट्रांस हिमालय की ऊंची पर्वत श्रृंखलाओं की गोद में बसे लद्दाख भारत को पाकिस्तान और चीन पर रणनीतिक बढ़त देता है। चीन पाकिस्तान आर्थिक गलियारे और चीनी सेना की घुसपैठ की चुनौती इस क्षेत्र की बढ़ी समस्या है। क्षेत्रीय सुरक्षा और आर्थिक विकास के लिए क्षेत्र में मजबूत पकड़ बेहद महत्त्वपूर्ण है। छठी अनुसूची ने जनजातीय क्षेत्रों में विकास तो कम ही किया है, लेकिन शक्ति के कई केंद्रों की स्थापना को बढ़ावा दिया है। छठी अनुसूची गैर-आदिवासी निवासियों के खिलाफ विभिन्न तरीकों से भेदभाव करती है, और उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती है। कानून के समक्ष समानता का अधिकार, भेदभाव के खिलाफ अधिकार तथा भारत में कहीं भी बसने के अधिकार को भी यह प्रभावित करती है। पूर्वोत्तर के राज्यों में आदिवासियों और गैर-आदिवासियों के बीच लंबे समय से संघर्ष तथा दंगों की पुनरावृत्ति के कारण छठी अनुसूची के प्रावधान भी रहे हैं। इनके कारण कई गैर-आदिवासियों को पूर्वोत्तर राज्यों से बाहर निकालना पड़ा है। लद्दाख जैसे सीमावर्ती प्रदेश में छठी अनुसूची लागू करने, स्वायत्ता के बढ़ने और अलग-अलग शक्ति केंद्रों के बढ़ने से सामाजिक- प्रशासनिक समस्याएं बढ़ सकती हैं। इसका असर भारत की सामरिक सुरक्षा को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है। अंततः यह समझने की जरूरत है कि विकास का आधार सिर्फ छठी अनुसूची नहीं हो सकती और लोगों की मांगों को सामरिक सुरक्षा पर तरजीह भी नहीं दी जा सकती।